को फिट रख सकती हैं। हम सभी जानते हैं कि हमें रोजाना एक्सरसाइज करना इतना आसान नहीं होता है, खास तौर पर जो महिलाएँ जॉब करती हैं और जिनके पास फिट रहने का समय कम होता है। लेकिन अपने लाइफस्टाइल में कुछ बदलाव लाकर महिलाएँ खुद को फिट रख सकती हैं। अपनी फिटनेस को लेकर की गयी एक छोटी सी भी लापरवाही कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का कारण बन सकता है।

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट होता है कि महिलाएँ हर संकट से लड़ कर सभी कार्यों को समय पर पूरा कर सकती हैं।

संदर्भ सूची :

- नाई आइवन एफ "एम्प्लायमेंट स्टेट्स ऑफ मदर्स एंड एडजस्टमेंट ऑफ एडोलेसेंट चिल्ड्रेन मैरेज एंड फैमिली लिविंग" अगस्त 1959 वर्ष 21 पृष्ठ 240–44
- जागरण, अन्नपूर्णा वाजपेयी
- शर्मा अनुपम तथा वार्षनेय संगीता (2013) इक्कीसवी शताब्दी में महिला समस्याएँ एवं संभावनाएं, अल्फा पब्लिकेशन, नई दिल्ली
- डॉ० प्रमिला कपूर, कामकाजी भारतीय नारी, राजपाल एंड संस, दिल्ली
- वर्मा अंजली (2009), भारत में कार्यशील महिलाएँ, ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली
- सिंह वी० एन० (2010), आधुनिकता एवं महिला सशक्तिकरण, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर

मधु काँकरिया के औपन्यासिक पात्रों का राजनीतिक चेतना

गुड्डू कुमार सिंह*

सारांश : 1990 के दशक से अपनी साहित्य कथा संसार की यात्रा शुरु मधु काँकरिया का अधिकांश लेखन सामाज में फैले तमाम तरह की रुढियों और अर्न्तविरोधों की पड़ताल करते हुए तह तक जाती है और पाठकों के समक्ष पूरी साफगोई के साथ आती है। इनके उपन्यासों के सभी प्रमुख पात्रों में राजनीतिक समझ है। इन पात्रों के माध्यम से लेखिका ने राजनीति के पहलुओं को उभारने की कोशिश की है। इनके उपान्यासों में युग विशेष की ऐतिहासिक यर्थाथ की रक्षा करते हुए नक्सलवादी आंदोलन, आतंकवाद, कश्मीर की स्थिति, कश्मीर पर राजनीति, आर्मी की दशा व उसपर दबाब, आर्मी का अत्याचार, पुलिस व्यवस्था, शोषण, धार्मिक कर्म–काण्डों व ढोगीं बाबाओं का पर्दाफाश, घर्म के नाम पर भोली–भाली जनता का मानसिक, शारीरिक तथा आर्थिक शोषण आदि को गंभीरतापूर्वक उठाया गया है। इनके उपन्यासों की सबसे महत्वपूर्ण बात है पाठकों को प्रत्यक्ष रुप से साहित्य के माध्यम से ऐतिहासिक समस्याओं के कारणों का सामना होता है। चाहे कश्मीर समस्या हो या नक्सलवाद की समस्या हो इन तत्कालिक राष्ट्रीय मुद्दों को मधु जी बेबाकी से उठाया है।

औपन्यासिक कथा संसार के पंमुख नियामक एवं उसके स्वरूप निर्घारक तत्व उपान्यास के पात्र ही होते हैं। पात्रों से ही कथा–संसार बनता है। पात्रों के क्रिया–कलाप से ही कथानक में गति आती है। पात्र के अंतरंग–बहिरंग क्रिया व्यापार से ही उपान्यास का पाठक तत्कालीन समाज के देश–काल व वातावरण, सोच विचार एवं संवाद की कला से अवगत होता है।

मधु काँकरिया आधुनिक कथा साहित्य में अपने बैविध्यपूर्ण कथानक की संपूर्ण झाँकी के साथ उपस्थित हुई है। अपनी बेवाक शैली, अनुभव एवं व्यवहारिकता की समागम के साथ समाज में घटित धटनाओं पर आघारित यर्थाथ बोध से भरीपरी उपान्यासों की रचना करके मघु काँकरिया ने हिन्दी पाठकों के मानस–पटल पर अमिट छाप छोड़ने में सफल हुई है ।

औपन्यासिक रचना विधान में तीन घटक कथानक, चरित्र और रचनात्मक अभिप्राय मुख्य होता है, जो लेखकीय संवेदना को उजागर करता है। मधु जी ने इन्हीं

*एम. ए. हिन्दी नेट

तीनों तत्वों की सृष्टि यर्थाथबादी नजरिये से की है। इन्होंने अपने परिवेश में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर जो कुछ सुना, जो कुछ देखा, उसका सत्यापन खुद अपने औपन्यासिक धटनाक्रम के साथ–साथ किया है। इनके उपान्यासों में युग विशेष की ऐतिहासिक यर्थाथ की रक्षा करते हुए समकालीन अपेक्षाओं और यर्थाथ की स्थापना, पाखंड, शोषण, नक्सलवादी आंदोलन, आतंकवाद, कश्मीर की स्थिति, कश्मीर पर राजनीति, आर्मी की दशा व उस पर दबाब, आर्मी का अत्याचार, पुलिस व्यवस्था तथा घर्म के नाम पर भोली–भाली जनता का मानसिक, शारीरिक तथा आर्थिक शोषण करने वाली व्यवस्था आदि का पर्दाफाश किया गया है। मधु जी एक ओर जहाँ अपनी संस्कृति और परंपरा के मूलभूत तत्वों को अपने सीने से चिपकाये रहती है, वहीं दूसरी ओर संस्कृति और परंपरा के नाम पर पनपने वाले कुकुरमुत्ते रूपी अपसंस्कृति को उखाड़ फेंकना चाहती है। इनका राजनीतिक बोघ स्वातंत्रोत्तर भारतीय राजनीति के छद्म राष्ट्रीयतावाद, संप्रदायवाद तथा लोक कल्याणकारी संवैधानिक व्यवस्था के स्थान पर स्व–कल्याणकारी व्यवस्था की कोख से उपजी है। मघु जी भी एक आम नागरिक की तरह सोचती है कि स्वतंत्रता के बाद भारतीय जनमानस आज इतना हैरान, परेशान तथा आक्रोश से भरा क्यों है? आज भी बेरोजगारी, बीमारी, भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद तथा गरीबी से लोग इतना क्यों परेशान है? आज भी लोग पुलिस प्रशासन से क्यों इतना खौफ खाते हैं? कश्मीर समस्या का स्थायी समाधान क्यों नहीं हो रहा है। अपने उपन्यास "सूखते चिनार" में मेजर संदीप के माध्यम से लेखिका ने कश्मीर समस्या के कारणों पर प्रकाश डाला है। क्या पँजीवाद से मानवीय समस्याओं का समाघान संभव नहीं है? क्यों बेरोजगारी से परेशान युवा पीढ़ी नक्सलवाद कर ओर उन्मुख हो रहे हैं? ''खुले गगन के लाल सितारे'' के प्रमुख पात्र गोबिन्द दा हों या मणि – सभी पात्रों का राजनीतिक बोघ यर्थाथ, परिपक्व तथा संदेह से परे है। यह मधु जी की पहली रचना है जिसमें कथा लेखिका ने भावनाओं और विचारों, दुख और आक्रोश, भय और साहस के अत्यन्तमहीन धागों से नक्सलवादी आन्दोलन और कश्मीर समस्या के बीज–बपण, प्रसार–प्रचार तथा अनछुए पहलुओं को उजागर किया है, जो अक्सर इतिहास के ग्रथों में भी उजागर नहीं किये जाते हैं।

स्वातंत्रोत्तर भारत में साहित्यक जगत में 'कॉफी हाउस' एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान था; जहाँ प्रायः साहित्यिक गतिविधियों पर चर्चाएँ चला करती थीं। पटना, कोलकाता, वाराणसी तथा इलाहाबाद में ऐसी अनेक ''कॉफी हाउसें'' थी; जहाँ जाने–माने साहित्यकार, कलाकार एवं अन्य बुद्विजीवी लोग आकर बैठा करते थे। ''खुले गगन के लाल सितारे'' में भी महिला लेखिका ने लिखा है ''सामने दीवाल पर लगे बड़े से धब्बे की ओर दृष्टि केन्द्रित हो जाती है गोबिन्द दा की.....भीतर

बेतरतीब सी ही सही पूरी रील धूमने लगती है। ''हमारे कॉफी हाउस कार्मन रूम में अक्सर गरमा गरम बहस छिड़ी रहती। माओ, लेलिन की आत्मा जैसे हमलोगों में पूरी तरह उतर चुँकी थी : मेरा दोस्त प्रसून बड़े जोश के साथ कहता – ''ताजमहल, राजमहल, अन्तःपुर की प्रेम–कथाओं से अँटे–पड़े इतिहास के पन्नों में क्या एक भी पृष्ठ ऐसा है, जो किसी श्रमवीर के माथे के पसीने, पैरों के छाले , हथेलियों के ठाढ़ की गीत गाता हो। सभ्यता के सम्पूर्ण इतिहास में संघर्ष किसी और का... और वर्चस्व किसी और का रहा है। सोचने का यह निहायत मौलिक अन्दाज हमारे बौद्विक समाज के लिए टॉनिक का काम करता। हम छटपटाते। फड़फड़ाते.... हम क्या करें? हमें देश चाहिए था।''[1]

क्रांति की सुगबुगाहट उन दिनों आम बात हो गई थी। भारत स्वतंत्र था लेकिन आम भारतीय परतंत्र ही थे। इनका शोषण यथावत् था। सिर्फ शोषणकर्त्ता बदले थे। पहले सात समुन्दर पार से आये ब्यापारी गोरी चमड़ी वाले अंगरेज थे; आज इसी देश की कोख से जनमे काली चमड़ी वाले अंग्रेजीदाँ नौकरशाह, भ्रष्ट और बेईमान नेता तथा व्यापारी वर्ग है। जिस भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक आह्वान पर आम जनता थिरकती थीं, आज वही जनता का कांग्रेसनीत् सरकार की लोकानुच्युत नीतियों एवं बढते भय, भुख और भ्रष्टाचार के चलते बिदकने लगी थीं। गुटबाजियाँ, भाई–भतीजावाद, आदर्श विदेश नीति के चलते भारत की आन्तरिक स्थिति एवं वाह्य स्थिति दोनों बदतर होते जा रही थी। वाह्य स्तर पर भारत चीन के साथ हुए युद्व में बुरी तरह हार चुका था, पाकिस्तान के साथ हुए युद्व में जीतने के बावजूद भी अपना बहुत बड़ा भू–भाग गवाँ चुका था। अपने पौरूष से हताश भारतीय जनता का कांग्रेसी सरकार से मोह भंग हो चुका था। इसी क्रम में जय प्रकाश नारायण, राम मनोहर लोहिया आदि समाजवादी नेताओं के नेतृत्व में संपूर्ण क्रांति का आगाज हो चुका था। पश्चिम बंगाल की जनमानस में केन्द्र एवं राज्य दोनों के गलत एवं शोषणकारी नीतियों के विरोघस्वरूप कम्युनिष्ट विचारघारा अपनी गहरी पैठ बना रही थी। इसके परिणामस्वरूप सर्वहारा वर्ग (भूमिहीन किसानों, मजदूरो एवं आदिवासियों) में जन जागृति आ रही है। दूसरी ओर पंचबर्षीय योजनाओं के माध्यम से भारत में कल–कारखनों का तेजी से विकास हो रहा था। कृषि लायक जमीनों को किसानों से छीन करके पूँजीपतियों को कारखना लगाने एवं अन्य कार्यों के लिए औने–पौने भाव पर बेचा जा रहा था। इस तरह की अराजक स्थिति में 1967 में पश्चिम बंगााल में एक सशक्त आंदोलन की शुरूआत हो चुका था– ''तो मैडम जी, विचारों के इन घटाटोपों के बीच प्रकाश की पहली पगडंडी दिखाई दी। 1967 के वसंत में पश्चिम बंगााल के जलपाईगुड़ी जिले में नक्सलवाड़ी ग्राम में। 'भूमि उसकी हल जिसका जोते जो', उसे की तर्ज पर हुई भूमि दखल के पहले

सशस्त्र आंदोलन में जिसमें भूमिहीन किसानों ने जमींदारों की भूमि दखल कर ली थी और एक सशस्त्र आंदोलन छिड़ गया था, शोषक–शोषितों के बीच"।[2]

गोविन्द दा की राजनीतिक विचारधारा अत्यन्त जोशिला एवं राष्ट्रवाद की भावना के विपरीत था। वे उपान्यास में एक जगह कहते हैं– ''और ज्यों–ज्यों नक्सल हम पर छाता गया, हम वामपंथियों में भी वामपंथी यानी नक्सल कहलाने लगे और हमारी नजरें अपनी भूमि से दूर उन नायकों की ओर केन्द्रित होने लगी थी जो सही मायने में जननेता थे, जनता के लिए, जनता के द्वारा, जनता का थे।''[3]

गोविन्द दा नक्सलवादी विचारधारा में आकंठ डूबे हुए नेता हैं। मणि से बातचीत के क्रम में वे खुलासा करते हैं–हमारे संगठन के नेता घ्रुपद मजुमदार ने भी उस समय हमें आह्वान करते हुए कहा था– ''ग्राम दिए, शहर घेरो, चारो तरफ भुखमरी, गरीबी और बेरोजगारी की बारूद बिछी है। बस चिंगारी लगाने की देर है, क्रांति की मशाल धधक उठेगी, तभी तुरन्त काम शुरू कर दिया जाए जमीन दखल का वर्ग शत्रु के खात्मे का और यही होगा हमारा सैनिक संग्राम। .....हमारा लक्ष्य था, गाँवों को वर्ग शत्रुओं से मुक्त कर उन पर अपना अधिकार जमाना और फिर एक से दूसरे गाँव, दूसरे से तीसरे, बहुत शीध्र ही एक एक मुक्तांचल की स्थापना और फिर क्रांति की धरा को शहर की ओर मोड़ना।''[4]

''खुले गगन के लाल सितारे'' में मघु काँकरिया ने दो युवा पात्र 'मणि' और 'इन्द्र' के माध्यम से पश्चिम बंगाल के आम युवा वर्ग के अन्दर राजनीतिक चेतना के पल्लवित एवं पुष्पित होने की जानकारी दी है। उन दिनों कोलकाता के प्रायः सभी स्कूलों, कॉलेजों एवं सार्वजनिक स्थानों की दीवारों पर साम्यवादी विचारघारा, मार्क्स, लेलिन, माओ आदि शब्द लिखे मिलते थे। इन युवाओं के क्रांति दर्शन के पीछे समाज की अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति को उसकी गरिमामयी उपस्थिति दर्ज कराना एवं जंगल, जमीन और शासन–प्रशासन में उसकी भागेदारी सुनिश्चित कराना था। इस कार्य के इन्हें किसी भी प्रकार की रास्ता अपनाने अथवा सामूहिक एवं व्यक्तिगत हिंसा–प्रतिहिंसा का रास्ता चुनने में कोई गुरेज नहीं था।'' खुले गगन के लाल सितारे'' के प्रमुख पात्र गोविन्द दा इसी युवा वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है। वे मणि से बातचीत के क्रम में कहते हैं– ''मैडम जी आप समझने की चेष्टा कीजिए, हमारे क्रांति दर्शन के पीछे उस समय एक चेतना थी, वह मन मस्तिष्क में बैठ चंकी थी और वह थी–''क्रांति बंदूक की नली से आती है। ''इसी तरह क्रांति दर्शन की व्याख्या करते हूए गोविन्द दा कहते हैं–''तो मैडम जी, ये कुछ काम तो हमने जरूर अख्छे किए कि समाज की अंतिम पंक्ति में खड़े मनुष्य को मनुष्य की गरिमा दो, उसके लिए उसे साथ ले उसके तरफ से लड़ाई लड़ी, पर हमारे चिन्तन

में कहीं कोई भूल रह गयी थी कि यह जन आंदोलन का सिलसिला काफी दिन नहीं चल पाया। दरअसल हमने वास्तविकता को बहुत छोटा करके देखा।''[5]

मधु काँकरिया के उपान्यासों के प्रमुख पात्रों के राजनीतिक सोच राष्ट्रीयता, देशभक्ति एवं समाजिक आर्थिक विन्दुओं पर अधिक यर्थाथपरक एवं व्यवहारिक है। सभी पात्र अपने–अपने उद्देश्यों को लेकर काफी जागरूक एवं उसकी प्राप्ति के लिए सतत् एवं व्यापक स्तर पर क्रियाशील है। वर्तमान समय में आतंकवाद पूरे विश्व के लिए एक ज्वलंत समस्या बन गई है। आज विश्व का लगभग सभी देश इससे पीड़ित है। भारत भी आज आतंकवाद की घटनाओं से बुरी तरह प्रभावित हैं। जम्मू व कश्मीर भारत का मुकुट मणि है। 1980 के उतरार्द्ध तक आते–आते कश्मीर में आतंकवाद अपनी जड़े जमा चुका था। जम्मू व कश्मीर में आतंकी घटनाओं का ब्यौरा डॉ. आदित्य आर्य ने अपनी पुस्तक 'कश्मीर पण्डितों का विस्थापन' में देते हुए कहा हैं, ''दिसम्बर, 1989 को डॉ. रुबैया के अपहरण से पहले राज्य में आतंकवाद पूरी तरह हावी हो चुका था। 1600 हिंसक घटनाएँ हो चुकी थीं, 351 बमफटने की घटनाएँ हुई थीं। यह सब 11 महीनों के दौरान हुआ था। एक जनवरी से लेकर 16 जनवरी, 1990 तक 319 हिंसक घटनाएँ, 21 सशस्त्र हमले, 114 बम फटने की घटनाएँ, 112 स्थानों पर आगज़नी और भीड़ द्वारा 72 हिंसक घटनाएँ हो चुकी थीं।''[6]

कश्मीर में वहाँ के हालात के लिए हमारे देश की राजनीति भी एक कारण रही है। सबने कश्मीर के बिगड़े हालातों से अपना फायदा उठाया जबकि आम जनता इससे पिसती ही रही। हलाँकि आज जम्मू व कश्मीर में धारा 370 हट चुकी है। आतंकी घटनाएँ कम हो गई है। वर्तमान में भी भटकी हुई अनपढ़ जनता को आतंकी अपना शिकार बना रही है। आज कश्मीर की हालात में सुधार लाने के लिए जम्मू व कश्मीर के उप राज्यपाल के द्वारा कश्मीरियत को पुनः स्थापित करने की कोशिश की जा रही है।

मधु कांकरिया ने अपने उपन्यास 'सूखते चिनार' में इस समस्या के मूलभूत कारणों को तलाश करने का प्रयास किया है। उपन्यास के नायक मेजर संदीप ने वहाँ के हालातों को नज़दीक से देखा है। वह कश्मीर की वर्तमान स्थिति को कुछ ऐसे प्रकट करता है ''देखते–देखते कश्मीर क्या हो गया? पैसा जरूर कश्मीर में आया, पर कैसा पैसा? फिज़ाओं में गीत नहीं, खेतों में मज़दूर नहीं, स्कूलों में बच्चे नहीं, घरों में चिराग़ नहीं, चारों ओर नज़र आती हैं विधवाओं की ताज़ाफसल। हर घर के पीछे नज़र आती है एक ताज़ा कब्र। जश्न मनाती, शिकारे पर गाती वह कश्मीरी औरतें अब कहीं नहीं दिखती। अब दिखते हैं सिर्फ रात के अँधेरे में रेंगते, दरवाज़ा खटखटाते जेहादी, या दिन के उजालें में गश्त लगाते बूट ठकठकाते, ए. के.47 तानते हिन्दुस्तानी फ़ौजी।''[7]

जेहाद के नाम पर आज कश्मीर का युवा पूरी तरह भटका नज़र आता है। धर्म के ठेकेदार अपना स्वार्थ बनाए रखने के लिए उन मासूमों का प्रयोग करते हैं।

उनकी एक आवाज़ पर युवा पत्थर उठाने में तनिक देर नहीं करते। उपन्यास के नायक मेज़र संदीप जब अपने मुसलमान खबरिए से पूछता है कि इतनी सख्ती, चौकसी, दहशत और हिदायतों के बावजूद उसके एरिया में कोई जेहादी कैसे बन गया। वह उसे जवाब देते हुए कहता है, ''साहबजी, एक तो यहाँ इस्लाम का चाबुक हर घर में लटका रहता है। लोग यहाँ ज़िंदगी से ज़्यादा अल्लाह, कुरान, नमाज़ और दाढ़ी–टोपी में दिलचस्पी रखते हैं। दूसरा जेहादी बनते ही सारा गाँव उसे और उसके परिवार को डर और इज्ज़त से देखने लगते हैं। क्योंकि जेहादी बनते ही उनके घर की ताकत और रईसी दोनों बढ़ जाती है। सुना है कि जमील ने भी जानलेवा भूखमरी और ज़िदगी की जिल्लत से तंग आकर उठा ली गन और अब वह भी थिरक रहा है आतंकवाद की ताल पर।''[8]

आतंकी बनने के मूल कारणों को लेखिका ने यहाँ उजागर किया है। परिस्थितियाँ कई बार व्यक्ति को ऐसा करने पर मजबूर कर देती हैं। कश्मीर में कई स्थानों पर लोगों में अन्ध–विश्वास, अशिक्षा, भूखमरी और बेरोज़गारी वहाँ के युवाओं को इस ओर जाने को विवश करती हैं। धार्मिक कट्टरता भी आतंक को जन्म देती है। किन्तु धार्मिक कट्टरता भी अज्ञानता से आती है। अब भारत सरकार के द्वारा नया कानून बनाकर जम्मू व कश्मीर के चहुमुखी विकास के लिए अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

''खुले गगन के लाल सितारे'' के गोविन्द दा कहते हैं –''व्यक्तिगत हिंसा हमारी क्रांति का अन्तिम अध्याय होना चाहिए था, जबकि हमने शुरूआत यहीं से की। पहले हमें यहाँ के लोगों को संगठित करना चाहिए था, उन्हें शिक्षित कर उनकी ताकत बढाना चाहिए थी। तभी शायद वे पुलिस, महाजन और जोतदारों से भयमुक्त हो सकते थे। चे–ग्वारा कहता था :''क्रांतिकारियों को लोगों के बीच 'फिश इन दि वाटर––यानी पानी के बीच मछली रहती है वैसे रहना चाहिए जबकि हमफिश आउट ऑफ वाटर हो गए थे।''[9]

वर्त्तमान भारतीय राजनीतिक व्यवस्था भले ही लोकतांत्रिक स्तर पर प्रौढ़ हो रही है लेकिन उसके अन्दर व्याप्त राजनीतिक कुव्यवस्था एवं राजनीतिक नेताओं के अमर्यादित महत्वाकांक्षा के चलते संर्पूण भारतीय समाज भ्रष्टाचार, भय और भुख के आगोश में समाती जा रही है। कहा तो यहाँ तक जा रहा है कि भारत की अस्मिता से भारत की अर्थव्यवस्था से जितना खिलवाड़ विदेशी आक्रमणकारियों एवं अंग्रेजों ने किया उससे कई गुना ज्यादा खिलवाड स्वतंत्र भारत के तथाकथित

भ्रष्ट नेताओं, नौकरशाहों एवं पूँजीपतियों ने किया था। आधुनिकता के चकाचौंध में मैंने अपनी विरासत को भुला दिया। भारत जिसका अतीत स्वर्णिम था, उदात्त मानवीय मूल्यों का पोषक था, त्याग, सेवा, सत्यनिष्ठा, सत्यवादिता, ईमानदारी आदि जिसकी कण–कण में व्याप्त थी, आज वही भारत अपनी सांस्कृतिक परम्परओ को भुला रहा है। यही भारतीय समाज जहाँ 'या देवि सर्वभुतेषू' का यशगान किया जाता था आज प्रतिदिन उसी देवि का मानमर्दन हो रहा है लेकिन हम कुछ नहीं कर पा रहे है। आखिर क्यों? मधु काँकरिया ने अपने उपान्यासों के माध्यम से भारतीय संस्कृति के उच्चादर्शों एवं उच्च मानवीय मूल्यों को पुनः परिभाषित करते हुए अपने औपन्यासिक पात्रों के माध्यम से पुर्नस्थापित करने की कोशिश की है।'' खुले गगन के लाल सितारे'' की कथा नायिका ''मणि'' के माध्यम से मधु जी ने कुछ आत्मसंस्करणात्मक प्रश्नों को उठाया है जो आज भी प्रासंगिक है–क्या जीवन की परिस्थतियाँ मानवीय संकल्पों को भुला देती है? या अपने आस–पास फैले व्यापक भ्रष्टाचार और अनाचार व्यक्ति को विशुद्व और नैतिक नहीं रहने देते। ऐसे प्रश्न मेरे अन्दर उबलते पानी से खदबदा रहे थे।''[10]

समाज के अंतिम पायदान पर खड़ा आदिवासी समाज के प्रति नियम व कानून तो बहुत बने हैं, नानाबिध कल्याणकारी योजनाओं को सरकार ने स्वतंत्र भारत में क्रियान्वित करने की डपोरशंखी धोषणाएँ की है, फिर भी आदिवासी समाज का सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति जस का तस है। मघु के उपान्यासों में इस समाज का आँखों देखा हाल मानो तमाम सरकारी योजनाओं की पोल खोलती नजर आती है। झारखंड के आदिवासी बहुल इलाके की गरीबी का वर्णन कथा लेखिका ने इस प्रकार किया है ''माई घर के भीतर लेंगटे बइठल बारी और दादी दूनो जानी एक ही साड़ी अदल–बदल के पहिरेली।''

ऐसी विकट गरीबी का वर्णन करके कथा लेखिका ने भारतीय समाज में व्याप्त भुखमरी और फटेहाली का पर्दाफाश किया है। ऐसी ही गरीबी का वर्णन गोस्वामी तुलसीदास ने 'कवितावली' में किया है –

''खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि,
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।
जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,
कहे एक एकन सों, कहाँ जाई का करी।'' [11]

मधु जी ने स्वतंत्र भारत के आदिवासी समाज का यथार्थ वर्णन किया है जिसमें भयंकर गरीबी से परेशान ये आदिवासी आज भी धर से बाहर निकलने से कतराते हैं क्योंकि इनके तन पर वस्त्र नहीं है। इनके आर्थिक दशा देख करके गोबर गैस प्लांट की विराट योजना को अमलीजामा पहनाने के बजाय आई. आई.

टी. की भारी भरकम डिग्रीधारी सुटेड–बुटेड तेईस बर्षीय युवक का हृदय परिवर्तन हो जाता है। अब वह आदिवासी समाज की सेवा एवं उसके चतुर्दिक विकास को अपना लक्ष्य र्निधारित करता है। लोग उसे विशुनपुर का गाँधी कहकर पुकारते लगते हैं। 'आलोक जी भगत' नामक इस युवक की राजनीति और सामाजिक चेतना अत्यन्त पारदर्शी है। ये क्रांति को बंदूक के नली से नहीं अपितू आदिवासी समाज को जागरूक, शिक्षित एवं संगठित करके जागृत करने के हिमायती हैं।

मधु जी ने ''खुले गगन के लाल सितारे'' में एक ओर नक्सलवाद का जन्म, प्रसार एवं अवसान को दिखाया है तो वहीं दूसरी ओर नक्सलवाद जैसी समस्या से निजात पाने के लिए भी कुछ सटीक उपाय बताये हैं। उपन्यास के दो महत्वाकांक्षी पात्र एक 'इन्द्र' और दूसरा 'आलोक जी भगत' के वैचारिक मतभेद के माध्यम से कथा लेखिका ने तुलनात्मक आधार पर भारतीय संस्कृति के उच्च मानवीय मूल्यों को पुनःस्थापित करने की कोशिश की है। इन्द्र समाज की उस युवा वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जिसे वर्त्तमान भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था से पूरी तरह मोहभंग हो चुका है। वह व्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिए बंदूक का सहारा लेने का हिमायती है उसकी आस्था लोकतंत्र, गाँधीवाद तथा चुनाव प्रक्रिया में नहीं है। वह इस समस्या का तुरन्त समाधान चाहता है। इस कारण वह नकारात्मक और मूर्तिभंजक ज्यादा है। ''खुले गगन के लाल सितारे'' की कथा नायिका ''मणि को एक बार उसने कहा था – ''जहाँ सिर्फ कुछ बोरी धान के लिए किसी कुवाँरी को अपने गर्भ में पलते अवैध शिशु का समझोता करने को बाध्य होना पड़े वहाँ वह और इन्तजार नहीं किया जा सकता ।''[12]

'आलोक जी भगत' में इन्द्र की तरह अकुलाहट नहीं है। वे आदिवासी समाज को मुख्यधारा में लाने के लिए अथक प्रयास करते हैं। एक सच्चे गाँधीवादी की तरह 'आलोक जी भगत' त्याग, सेवा और विकास के आधर पर आदिवासियों का दिल जीतना चाहते हैं। वे बिरसा मुंडा और जतरा भगत को आर्दश पुरूष मानते हुए आदिवासी समाज को संगठित करना चाहते हैं। सोमा मुंडा पेशे से अध्यापक हैं। उसे आदिवासी समाज के संस्कृति एवं सभ्यता की जानकारी है। वह कहता है– ''पहले हमारी अपनी स्वायत्त सरकारें थी। अपने कानून थे। अपनी सामाजिक पद्वति थी। यानी एक संपूर्ण आत्मनिर्भर ग्राम्य पद्वति। इस स्वायत्त व्यवस्था पर पहला हस्तक्षेप हुआ मुगल शासन में राजपूत नरेशों द्वारा। फिर धीरे–धीरे अंग्रेजों ने इन्हीं नरेशों और जमींदारों के मार्फत हमारे सारे अधिकार छीन हमारी व्यवस्था को तहस–नहस कर दिया। महात्मा गाँधी ने हमें वचन दिया था कि अंग्रेजों के यहाँ से जाने के बाद हम अपना शासन स्वंय करेंगे। लेकिन आजतक ऐसा नहीं हुआ। आज हमारी जमीन की एक–एक इंच इनके नियंत्रण में है। हमारे पास

अपनी जमीन का कोई सरकारी पट्टा भी नहीं है क्योंकि हमने स्वंय को प्रकृति पुत्र माना। इस कारण किसानों की तरह हमें मुआवजा तक नहीं दिया जाता।''[13]

सोमा मुंडा की राजनीतिक बोधगम्यता परतंत्र भारत के उन बुद्विजीबी वर्ग से मिलता जुलता है जिस वर्ग का शोषण कभी अंग्रेज करते थे। वर्त्तमान भारतीय राजनीतिक एवं आर्थिक नीतियों के परिणामस्वरूप समाज में छोटे–छोटे किसानों, कल–कारखानों में कार्यरत मजदूरों का शोषण सरकारी कल्याण्कारी योजनाओं यथा मनरेगा में भ्रष्ट राजनीतिज्ञों, नौकरशाहों, व्यापारियों एवं माफियाओं के मिलीभगत के परिणामस्वरूप किया जा रहा है। उदारीकरण के बाद कालाधन को हवाला के माध्यम से रिएल इस्टेट, कल–कारखानों एवं अन्य व्यवसाय में लगाया जा रहा है। सरकार द्वारा इनके जरूरतों को पुरा करने के लिए अत्यन्त कम दर पर जमीन एवं अन्य सुविधाएँ दी जा रही है। किसानों के जमीन का अधिग्रहण जोर–जबरदस्ती किया जा रहा है; नंदिग्राम की धटना इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

मधु काँकरिया का दूसरा प्रमुख उपन्यास 'पत्ताखोर' का नायक' आदित्य 'श्रमजीवी वर्ग के फरिश्ता बनकर आता है। उसकी राजनीतिक चेतना शक्ति श्रमिक वर्ग की दशा और दिशा देखकर जागृत हुई है। वह कहता है– ''मैं कहता हूँ..... आप सभी यूनियन बनाइए, सभी रिक्शेवालों की, राजमिस्त्रयों की, हॉकरों की अपनी यूनियन हो, काम के धंटे, न्यूनतम मजदूरी, काम की दशा, श्रमिक इंश्योरेंस के अलावा आप सभी रिक्शेवाले विकल्प तलाशें... ऑटो, टैक्सी ड्राइवरी कुटीर उद्योग जैसे कई काम हैं.... हम एक कॉमन फंड बनाएँ.... जिसमें सबके स्वास्थ्य और शिक्षा पर ध्यान दिया जाए....न्यूनतम मजदूरी तय करवाई जाएगी। हम अन्याय और अत्याचार सहने के अभ्यस्त हो गए हैं। नून–रोटी के संधर्ष और जिन्दा रहने की जंग ने हमें ऐसे पिलपिले कद्दू में बदल डाला है कि हमारी प्रतिरोधी ताकत ही मर गई है। लोग हम परकहर ढाहते जाएँगे और हम सोचते जाएँगे... भोला बाबा पार करेगा... सब दुखों का नाश करेगा। हमारे इसी भाले विश्वास और संतोष का नतीजा है कि सुबह से शाम तक हम सभी हड्डी तोड़ मेहनत के बाबजूद हम भुख से, गर्मी से, हैजा से, कुपोषण से, ठंड से मर रहे है और हमारे बच्चे.....जिनके हाथों में किताबें होनी चाहिए ....उनके हाथों में झाड़ू है.....चाय की केतली है..... उगलती आग की भट्टी है। सिर पर सामर्थ्य से अधिक बोझा है। इसी जंगली समय में वे सारी चीजें मँहगी हो रही है जो हमारे काम की है, रोटी, चावल, सत्तू, चाय, तेल, किरासन .....सिर्फ एक ही चीज दिनों दिन सस्ती हो रही है...मजदूरी और मजदूर का जान। हमारे बचाव का एक ही रास्ता है संगठन और हम यदि संगठित नहीं हुए तो यह दुनियाँ हमें जीने नहीं देगी। याद रखिए संध ही सत्य है... संगठन ही शक्ति है। व्यक्ति शून्य है।''14

मधु काँकरिया ने धर्म, समाज और राजनीति के आपसी तालमेल से ही वर्तमान समस्याओ का निदान ढुँढने के लिए अपने उपन्यासों में विभिन्न प्रकार के सामाजिक संगठनों के गठन करने की बात की है। वे तत्युगीन सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं का समाधान संगठनात्मक तौर पर करना चाहती है । इनके लगभग सभी उपन्यासों के प्रमुख पात्रों ने नारी मुक्ति संध, श्रमजीवी संध आदि बनाते हैं और समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, व्यभिचार, भुखमरी, गरीबी में आदि सर्वकालिक समस्याओं का निदान करने का मार्ग प्रशस्त किया है।'' सेज पर संस्कृत'' उपन्यास का प्रमुख पात्र 'विजयेन्द्र मुनि' भी धार्मिक रंग में रंगने के बावजूद अन्दर से काइयाँपन से लबरेज था। घर्म की आड़ में उसने छोटकी का शीलहरण किया था। कहने का मतलब यह है कि अभय मुनि हो या विजयेन्द्र मुनि इस तरह के सभी तथाकथित घार्मिक व्यक्तित्व का धनी व्यक्ति भोली–भाली जनता को घर्म के नाम पर मानसिक, शारीरिक, आध्यात्मिक तथा आर्थिक शोषण करता है।

मधु जी के उपन्यासों के प्रमुख पात्रों के स्वाभाव, सोच आदि में कालान्तर में परिवर्त्तन आता है।

''सेज पर से संस्कृत'' उपन्यास का प्रमुख पात्र 'विजयेन्द्र मुनि' हो या 'संधमित्रा'; ''खुले गगन के लाल सितारे'' के 'गोविन्द दा' हों या सुटेड–बुटेड 'आलोक जी भगत'; 'सलाम आखिरी' की सुकीर्ति हो, लगभग सभी पात्रों में वैचारिक बदलाव कथाप्रवाह में आता है। आज भारतीय राजनीति में जातिवाद, परिवारवाद क्षेत्रवाद, भाषावाद, संप्रदायवाद आपसी गुटबाजी आदि का बोलबाला है। त्याग, सेवा देशप्रेम बलिदान आदि की भावना अब इतिहास की धरोहर हो गई है। अब भारतीय नेता ही माँ भारती का आर्थिक शोषण कर रहे हैं। मधु काँकरिया का कहानी संग्रह 'बीतते हुए' में इन समसामयिक मुद्दों को उठाया गया है। धन और सत्ता के बल पर कुछ भी पाया जा सकता है। 'रहना नहिं देश बिराना है'' कहानी के माध्यम से मधु जी ने यह बताने की कोशिश की है कि ''अपने देश की व्यवस्था और भ्रष्टचार को देख कुढने से कुछ हासिल नहीं होने वाला। करो यह कि अपने बच्चों को बेस्ट तालीम दो..... जिससे वे जहाँ भी जाँए उस देश की इकोनामी को रूल करें....यहूदियों को देखो आज अमेरिका की चालीस प्रतिशत इकॉनामी को वे ही रूल कर रहे हैं।''[15]

सदियों से भारत ने हिन्दुओं, जैनियों और बौद्धों के बीच के संप्रदायिक हिंसा को देखा है। मध्यकाल से अब तक हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच होने वाले दंगे–फसाद का यथास्थान वर्णन भी किया जाता है । 1984 का हिन्दू–सिक्ख दंगों का आँखों देखा हाल का वर्णन कथा लेखिका ने अपनी कथा में किया है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि मधु काँकरिया के लगभग सभी पात्रो की राजनीतिक चेतना स्वतंत्रोत्तर भारत के युवाओं के बौद्विक चेतना को प्रतिबिंबित करती है । स्वतंत्रोत्तर भारत के शुरूआती बीस वर्षों में ही गाँधी जी के चेलों द्वारा क्रियान्वित नीतियों से आम जन का मोहभंग हो चुका था। इनकी अधिकांश कहानियाँ तथा उपन्यास समसामयिक ज्वलंत मुद्दों को परिधि में रखकर लिखी गई है। इनके सभी पात्र वैचारिक स्तर पर प्रगतिशील, परिपक्व एवं यर्थाथवादी नजर आते हैं। इन पात्रों की राजनीतिक बोध प्रतिक्रियावादी, गरीबोन्मुखी तथा कम्युनिष्ठ विचार धारा से प्रभावित मालूम होता है। कहीं कहीं तो कथाप्रवाह के क्रम में यह प्रतीत होता है कि मधु काँकरिया ने स्वंय अपनी राजनीतिक विचारधारा का आरोपण इन पात्रों के ऊपर करके आम जनता को जगाने का काम किया है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. 'खुले गगन के लाल सितारे' लेखिका मधु काँकरिया, प्रकाशक– राजकमल प्रकाशन, पहली आवृति 2007, पृष्ठ–13
2. उपरिवृत ..... पृष्ठ–13
3. उपरिवृत ..... पृष्ठ–14–15
4. उपरिवृत ..... पृष्ठ–19
5. उपरिवृत ..... पृष्ठ–33
6. कश्मीरी पण्डितों का विस्थापन, लेखक डॉ. आदित्य आय, पृष्ठ–62
7. 'सूखते चिनार' लेखिका मधु कांकरिया, पृष्ठ–134
8. 'सूखते चिनार' लेखिका मधु कांकरिया, पृष्ठ–101
9. 'खुले गगन के लाल सितारे' लेखिका मधु काँकरिया, प्रकाशक– राजकमल प्रकाशन, पहली आवृति 2007, पृष्ठ–14–15
10. उपरिवृत ..... पृष्ठ–14–15
11. 'कवितावली' लेखक गोस्वामी तुलसीदास, प्रकाशक– साहित्य भवन प्रा0लि0 जीरो रोड, इलाहाबाद प्रकाशन..... पृष्ठ–175–176
12. 'खुले गगन के लाल सितारे' लेखिका मधु काँकरिया, प्रकाशक– राजकमल प्रकाशन, पहली आवृति 2007, पृष्ठ–87
13. उपरिवृत ..... पृष्ठ–92
14. 'पत्ताखोर' लेखिका मधु काँकरिया, प्रकाशक– राजकमल प्रकाशन, पहली आवृति 2007 पृष्ठ –188
15. 'बीतते हुए' कहानी संग्रह लेखिका मधु काँकरिया, प्रकाशक–राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण 2004, पृष्ठ–54